हमारी आजादी, कितनी आजाद?

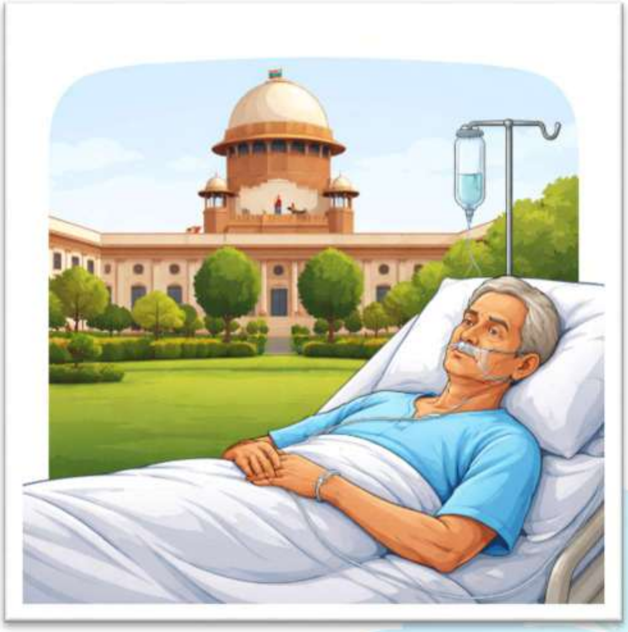

हमारा संविधान औपनिवेशिक गुलामी से बाहर निकल रहे लोगों ने बनाया है। वे आजादी के मोल को अच्छी तरह से जानते थे। यही कारण है कि कई देशों की तुलना में भारत का संविधान प्रत्येक नागरिक को देश के केंद्र में रखता है। लेकिन अक्सर व्यावहारिक स्तर पर इस व्यक्तिगत आजादी में कभी-कभी कमी आ जाती है।

इच्छा-मृत्यु का मामला -

हरीश राणा 13 वर्ष से मरणासन्न स्थिति में था। इस दौरान उसके माता-पिता उनकी देखभाल करते रहे हैं। उन्होंने अपने बेटे के लिए न्यायालय से इच्छा-मृत्यु की अनुमति देने की गुहार भी लगाई। ज्ञातव्य हो कि 2011 में ऐसे ही एक मामले में अरूणा शानबाग बनाम भारत संघ और 2018 में कॉमन कॉज बनाम भारत संघ मामले में न्यायालय ने अनुच्छेद 21 के आधार पर जीवन के अधिकार की तरह ही सम्मानजनक मृत्यु के अधिकार को महत्वपूर्ण माना था। बावजूद इसके राणा के माता-पिता को इसे इस्तेमाल करने के लिए स्वास्थ्य और न्यायिक क्षेत्र में कई चक्कर काटने पड़े और 13 वर्ष तक इंतजार करना पड़ा।

अन्य मामलों की स्थिति -

सैद्धांतिक रूप से तो देश में एक वयस्क को अपनी पसंद से किसी भी दूसरे वयस्क से प्रेम करने की छूट है। असल में, खाप पंचायतें, लव जिहाद कानून तथा आनर किलिंग जैसे दखलंदाज ऐसा होने नहीं देते।

इसी तरह, एक महिला को शारीरिक स्वतंत्रता दी गई है। लेकिन डॉक्टर और न्यायाधीश उसके गर्भपात के अधिकार को छीन सकते हैं। इतना ही नहीं, हमारे देश में व्यक्तियों के खानपान जैसे बुनियादी अधिकार पर भी कभी भी सरकारी आदेश या जनता का डंडा चल सकता है।

यही स्थिति विचारों की दुनिया में भी देखी जाती है। कभी किसी फिल्म, कभी पेंटिग तो कभी किसी पुस्तक पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। इन सबके बीच में यह जरूर समझा जाना चहिए कि अभिव्यक्ति की आजादी के अभाव में यदि नागरिक अपनी पूरी क्षमता तक नहीं पहुँच सकते, तो देश भी नहीं पहुँच सकता।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 12 मार्च 2026

AFEIAS